“यो म्हारो नानकियो उदेपुर है”

यादों के झरोखे से ख़ास मुलाकात- पुराने उदयपुर के साथ

उदयपुर में एक ख़ास किस्म की नफासत है, जो दिल्ली, जयपुर या किसी और शहर में नहीं मिलती। केवल इमारतें या बाग़-बगीचे ही नहीं बल्कि यहाँ की जीवंत विरासत (Living heritage) में पर्व, त्यौहार, मेले, ज़ुबान-बोली, घर-मोहल्ले आदि भी बच्चों और उनके अभिभावकों (केयरगिवर्स) को केंद्र में रखकर तैयार किये गए हैं। शहर को जब करीब से देखते-समझते हैं तो लगता है जैसे किसी ने यादों का मीठा शहद आँखों- कानों में घोल दिया हो। केवल राह चलते लोग ही नहीं, बल्कि इस शहर में तो सब्जी बेचने वाले से लेकर सोना-चांदी बेचने वाले तक बच्चों के लिए अलग से आपके झोले में कुछ डालने को तैयार रहते हैं। और जब वे मनुहार करते हुए ठेठ देसी मेवाड़ी में कहते हैं- “अरे जीया, यो आपरे वास्ते नी है, यो तो म्हारे भानेजा-भानेजी रे वास्ते म्हारी तरफ-ऊँ है” (बहन, यह मेरे भांजा-भांजी के लिए मेरी तरफ से भेंट हैं) तो शहर की विरासत और मेवाड़ी बोली, दोनों पर फक्र महसूस होता है। कई बार तो परकोटे के भीतर माहौल कुछ ऐसा हो जाता है कि अजनबी यही सोचकर कुछ बोलने से डरते है कि वे सबसे अलग दिखने लग जायेंगे कि- अरे इसे तो यह भी नहीं पता !!

नहीं पता तो जान लीजिये : अगर आप भी यहसोचते हैं कि शहर में बच्चों के खास ख्याल से जुड़ी ऐसी क्या बात है तो इस बार का यह लेख आपके लिए ही है। आपको भी यह जानने का हक है कि क्यों उदयपुर अन्य शहरों से अलग है।

उदयपुर शहर को बनाने वालों ने इसके निर्माण में कई चीज़ों का खास ख्याल रखा। यह शहर केवल किसी एक आयुवर्ग या वर्ण को देख-समझ कर डिजाइन नहीं किया गया। शहर बसाने वालों और बाद में इसमें और फेरबदल करने वालों ने इस बात का ख़ास ख्याल रखा कि शहर सबके लिए हो। बच्चों और उनके अभिभावकों (केयरगिवर्स) के लिए तो जैसे दोनों हाथ खोलकर लुटाया और शहर को बनाया। तो चलिए, शहर की एक परिक्रमा करते हैं और जानते हैं कि शहर कैसे बच्चों के नज़रिए से सजाया गया।

अगर बागों- उद्यानों की बात की जाये तो दूध तलाई- मगरी वाला बाग़ (वर्तमान में माणिक्यलाल पार्क), सहेलियों की बाड़ी, गुलाब बाग़, सुखाड़िया सर्किल आदि तो जैसे बच्चों और उनके केयरगिवर्स को ध्यान में रखकर ही तैयार किये गए। सहेलियों की बाड़ी में छतरी के ऊपर लगी चिड़िया की चोंच और हाथी की सूंड से निकलते फव्वारे हो या दूध तलाई में बच्चों के लिए बनी विभिन्न कलात्मक फिसलपट्टी, उदयपुर के हर एक बाशिंदे ने अपना बचपन वहां जीया ज़रूर है। इन सभी बागों- उद्यानों की बात फिर कभी, आज केवल गुलाब बाग़ की बात करते हैं।

गुलाब बाग़- बच्चों का बाग़ : चार शेरों, तीन दरवाजों और दो ढूल्लियों (गुड़िया के लिए मेवाड़ी शब्द) की डिजाइन से बना ये रंग-बिरंगा द्वार जो आप देख रहे हैं, यह हैं सज्जन निवास बाग। आम उदयपुरी इसे गुलाब बाग कहते हैं। सूरजपोल दरवाजे से अन्दर जाने के बाद महलों की तरफ बढ़ते ही यह बाग़ सबसे पहले सामने आता है। जयपुर के राम निवास बाग के बाद राजस्थान का सबसे बड़ा उद्यान। साल १८८० के आस-पास महाराणा सज्जन सिंह ने जब इसे बनाया तो इसे ख़ास बच्चों के लिए खूब सजाया।

बाग में जामुन, आम, जामफल (अमरुद) आदि स्थानीय फलों के हजारों पेड़ लगाये गए। कभी इन पेड़ों की निगरानी नहीं की गयी। जो फल निपजे, वो पंछी खाए और जो बच्चे बाग़ के अन्दर जाए तो वो भी भर भर के फल खाए।

बाग का एक हिस्सा "लोटन मगरी" के रूप में विख्यात हुआ। पिछले दशक तक का तो कोई बच्चा ऐसा न होगा, जिसने लोटन मगरी पर लोट न लगाई हो। जल्दी जल्दी ऊपर चढ़ो और लोटते-लोटते नीचे आओ। लोटने-गुड़कने का भी अपना आनंद ! लोटन मगरी से आगे चलते ही "लवकुश स्टेशन" है। यहां से बच्चों को पूरा बाग़ घुमाने के लिए एक ट्रेन "अरावली एक्सप्रेस" चला करती थी।

चार डिब्बों की इस रेल में बैठ कर पूरे बाग को घूमना हर बच्चे की दिली खाव्हिश होती। बच्चों के केयरगिवर भी चाहते कि एक बार बच्चे को इस रेल में ज़रूर बिठाया जाए। रेल आपको चिड़ियाघर भी लेकर जाती। रेल के साथ साथ हिरण कुलांचे भरते और उन्हें देख-देख कर बच्चे हर्षाते। एक लम्बे अरसे तक गुलाब बाग में चिड़िया घर रहा। बच्चों की जंगली और पालतू जानवरों की लम्बी जमात से पहली मुलाकात यहीं होती। गुलाब बाग में इसके अलावा भी बहुत कुछ ऐसा था जो केवल बच्चों के नज़रिए से तैयार किया गया। और केवल बाग ही क्या, बागों में लगने वाले मेलों-उत्सवों तक में बच्चों का खास ख्याल रखा गया।

मेले का दूसरा दिन: क्या आपने सुना है कि देश में कोई ऐसा मेला हो, जिसमें केवल महिलाएं और उनके छोटे बच्चों को ही शामिल होने की इजाजत हो ? सावन महीने की अमावस के दिन उदयपुर शहर में "हरियाली अमावस" का मेला लगता है। इसका दूसरा दिन केवल और केवल महिलाओं और उनके बच्चों के लिए आरक्षित किया गया। सैकड़ों सालों से यह रिवाज़ आज भी कायम है। मेले में मम्मी- मौसी का हाथ पकड़े बच्चे के दूसरे हाथ में पुपाडी या कपड़े से बना हरा तोता। खिलौनों से भरे मेले की अपनी ही एक शान है।

खिलौनों का भी अपना संसार: उदयपुर शहर लकड़ी के खिलौनों के लिए शुरुआत से काफी विख्यात रहा है। हाथीपोल बाज़ार के पुराने लकड़ी के खिलौना व्यापारी कमरुद्दीन कहते हैं कि शहर में राजे-रजवाड़ों के समय से ही लकड़ी के खिलौने बनते रहे हैं। इन खिलौनों में भी ७०% से अधिक खिलौने छोटे बच्चों के लिए बनते हैं। पालने में सोते बच्चे के लिए झुनझुने से लेकर पहली बार अपने क़दमों पर खड़े बच्चे के लिए तीन पहिये की गाड़ी, जिसके सहारे बच्चा खड़ा होकर चलना शुरू करता है। टिप टिप की आवाज़ से अलग अलग आवाजों से पहचान कराते खिलौने, रंगों और अंकों की पहचान कराते पारंपरिक "अबेकस"। जो थोड़े और बड़े होकर चौथे-पांचवे साल में पहुंचों तो हरे तोते और राणा की तलवार। खिलौनों का अपना संसार उदयपुर ने आज भी सहेज रखा है। जब बच्चा अपने पैरों पर चलना शुरू कर देता था तो माँ बच्चे की कमर से एक लकड़ी का पहिये वाला आवाज़ करता खिलौना बाँध देती। जहाँ बच्चा चलता-आवाज़ करते हुए खिलौना उसके साथ साथ। आवाज़ से मां पता लगा लेती कि बच्चा अभी कहाँ है।

एक दशक पहले तक उदयपुर का हर बच्चा घर में कपड़े की कतरन से बनी ढूल्ली खेलकर ही बड़ा हुआ है। यहाँ बच्चे का जेंडर नहीं देखा जाता। ढूल्लियाँ सबके लिए होती। लड़का हो या लड़की- ढूल्ली सबके हाथ होती। और इन ढूल्लियों को बनाने वाली घर की बड़ी-बूढ़ियाँ भी इन्हें बड़े चाव से बनाती और बनाते हुए अपने बचपन के गीत भी गातीं।

त्यौहार भी खास: मेवाड़ की दीवाली तब तक खास नहीं मानी जाती, जब तक कि घर की देहलीज पर बच्चे "गड्ल्यो" गीत ना गायें। गारे (मिट्टी) की ढूल्ली, जिसके दोनों हाथों और सिर पर दीये। उसे हाथ में लिए बच्चे घर-घर जाकर, गीत गाकर पड़ोसियों से उपहार और आशीर्वाद मांगते। साथ में हंसी-ठिठोली और एक दूजे परिवार से परिचय कि कौन किसका बच्चा है। "गड्ल्यो" गीत का सार कुछ यूँ है कि छोटा बच्चा घुड़कता हुआ नगर के अलग अलग ठौर जा रहा है और वहां से जुड़े किस्से बता रहा है। कि अगर बाग- बगीचे गया तो वहां क्या देखा और दोस्त के घर गया तो वहां क्या खोजा-पाया।

त्यौहार की बात चली तो एक उत्सव "गवरी" की बात करते चलें। मेवाड़ की बरसात के बाद ४० दिन चलने वाली लोक नाट्य "गवरी" भी बच्चों और उनके विकास के लिए ज़रूरी आयामों पर बात करती है। इसके प्रमुख खेल "अमरियो बडलियो" में राजा जब अपने महल निर्माण के लिए पाताल से प्रमुख पेड़ काटकर लाने की बात करते हैं तो उन पेड़ों से जुड़ी देवियाँ पर्यावरण की अहमियत के साथ साथ उन से जुड़े बचपन के दिनों को याद करके राजा को पेड़ न काटने की सलाह देती है। वो याद दिलाती है कि राजा के बचपन के दिन भी आम और नीम के पेड़ के नीचे कैसे बीते थे।

घर-चौक भी बच्चों के लिए: जब कभी आप उदयपुर के परकोटे में जायेंगे, आपको हर घर के बाहर "चबूतरी" मिल जायेंगी। घर की बाहरी दीवार से लगती बैठक। शाम को महिलाएं यहाँ बैठकर दिन भर की बातें करती और उनके सामने मोहल्ले के चौक में आस-पडोसी के बच्चों के साथ बच्चे जम कर खेलते। ये नज़ारे बीते कुछ सालों पहले तक बहुत आम थे। इस से जहाँ बच्चों को बाहर खेलने का मौका मिलता वहीँ उनका ध्यान रखते- रखते महिलाएं वहीँ अपनी थकान और "भड़ास" दोनों निकाल लेती। जो बच्चा कहीं खेलते खेलते गिर जाता और रो पड़ता तो माँ दौड़ पड़ती और प्यार से बच्चे को पुचकारते हुए कहती, "कई नी वियो, कीड़ी मरी गी बस" (अरे कुछ नहीं हुआ, बस चींटी मर गयी)।

हाब्लियो- खाब्लियो: मेवाड़ के कथा संसार में दो कथा-पात्र बार बार आते हैं। ये हैं हाब्लियो (कहने वाला) और खाब्लियो (सुनने वाला)। इतने प्रसिद्ध कि महिलाएं इनके गोदने (टैटू) सिर-ललाट और हाथों में गुदवा लेती। महिलाएं मानती है कि हाब्लियो-खाब्लियो ना हो तो उन्हें मरने के बाद स्वर्ग में जगह नहीं मिलेंगी। क्या आपको पता है कि ये हाब्लियो-खाब्लियो कौन है? ये ५ साल के दो पात्र है, जो दादी- नानी के मुंह से सुनी कहानी अपने से छोटे भाई- बहिन को सुना रहे हैं। इन पात्रों के माध्यम से बच्चों को सुनाई जाने वाली कहानियां और उनकी उपयोगिता सिद्ध होती है और हम ये समझ सकते हैं कि पुराने काल से ही बच्चों को कथा- कहानियां सुनाना कितना ज़रूरी माना जाता रहा है कि उसे लोक से साथ परलोक से भी जोड़ा गया है।

खैर, जब आज आप उदयपुर की यह सैर केवल बच्चों के नज़रिए से कर रहे थे तो बहुत कुछ पीछे छूट गया है। वैसे उदयपुर निहायत ही खुबसूरत शहर है। पिछोला, फतहसागर और सिटी पैलेस जैसी जगहों की बात और उनसे जुड़े किस्से- कहानियों पर फिर कभी किसी और लेख में बतियाएंगे।

चलते चलते: ऐसा नहीं है कि यह सब केवल उदयपुर की विरासत है। आपके शहर- जिले में भी बच्चों से जुड़ी बहुत सारी विरासतें होंगी, जिन्हें सहेजने की ज़रूरत है। यह वें विरासतें है, जिन्हें हमारे बड़े-बुजुर्गों ने अपने स्नेह से सींचा है। हमने अपने बचपन में इन्हें देखा है और जीया है। हम इन सबके साथ बड़े हुए हैं। किन्तु आज के दौर में हमारे आस पास के बच्चों के लिए क्या ये विरासत जिंदा है, इसे देखे जाने की ज़रूरत है।

आज केयरगिवर अपने काम में इतने व्यस्त रहते हैं कि बच्चे को व्यस्त रखने के लिए अक्सर मोबाइल फोन पकड़ा देते हैं या टीवी चालू कर देते हैं। जब हमने हमारे दौर में शहर के हर हिस्से में अपने बचपन को जीया है तो हम आज के बच्चों को उनसे दूर क्यों करें ? कोशिश करें कि अपने-अपने शहर में ऐसे स्थानों की पहचान करें और बच्चों के साथ वहां वक्त गुजारें। इससे जहाँ बच्चों को खेल-खेल में सीखने- सिखाने का नया अवसर मिलेगा, वहीँ आप अपने बचपन को भी फिर से जी पायेंगे। तो अपने बचपन से जुड़ी कहानियों को याद कीजिये और अगर आपके शहर में "बचपन" से जुड़ी कोई याद है तो उसे हमारे साथ ज़रूर शेयर कीजिये। ये किस्से कहानियों का दौर खत्म नहीं होना चाहिए। तब तक के लिए "नानकिये उदेपुर" (नन्हे उदयपुर) का प्रणाम स्वीकार करें। खम्मा घणी।

(लेख- ओमप्रकाश, सदस्य- अर्बन 95 टीम, उदयपुर)